

वासंतिका



लेखक

श्रीगंगाप्रसाद पाण्डेय



प्रकाशक

नवलकिशोर-प्रेस (बुकडिपो),

लखनऊ.

पहली बार] १६४० ई० [मूल्य ।।।)

Printed by K. D. Seth, at the Newul Kishore Press,
LUCKNOW.
1940.

निवेदन,

'पर्णिका' के बाद वासंतिका मेरे गीतों का दूसरा संग्रह है। इन गीतों के विषय में मुझे कुछ नहीं कहना क्योंकि ये सभी मुझे इतने प्रिय हैं कि इनके विषय में कुछ अधिक कह सकना मेरे लिये न तो सम्भव है और न आवश्यक!

पूजनीया महादेवीजी का बनाया कवर पृष्ठ का चित्र वासंतिका के आकार को सुन्दर और उसकी आत्मा को सहज ही में स्पष्ट कर देता है! उनकी इस ममतामयी कृपा का मैं हृदय से आभारी हूँ!

कञ्चनपुर
कोठी स्टेट, सी० आई०
१५ मई १९४०

—गंगाप्रसाद पाण्डेय

निर्देश

१

माँ, ज्योतिर्मय जीवन कर दे !

मधु-विहान की नवकिरणों से आलोकित अन्तरतम कर दे !

जागृति का सन्देश सुनाऊँ,
जग में सुषमा-श्री बरसाऊँ,
मेरी साँस साँस में माँ, तू अपनी वीणा का स्वर भर दे !
मेरा कवि नवजीवन लाये,
मानवता स्वच्छन्द बनाये,
जग-जीवन-उपवन में बरबस वासंतिका सहज छवि भर दे !
चिर-प्रकाशमय जीवन कर दे !



२

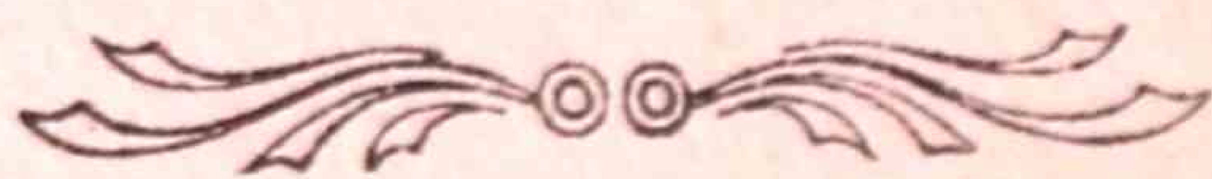
गा दे कोकिल, अनुराग-राग !

मृदु रव से जीवन भर जाये अलसित उमंग फिर उठे जाग !

सुरभित सुमनों का स्वर्ण-थाल

पा वसुधा हो सुख से विभोर,

मलयानिल पुलकित पंखों से
कर दे वितरण मधु सभी ओर ;
सस्मित विमुग्ध हों विश्व प्राण जो शिथिल श्रांत थे वीतराग !
नव किरण पंख पर नव विहान
आये जग में बन ज्योति-यान,
इन आकुल नयनों में भर दे
जीवन जागृति की छवि महान ;
फट जाये तम, छाये प्रकाश, भव-भीति भ्रांति में लगे आग !
गा दे कोकिल अनुराग-राग !



३

तरु बनो तुम प्राण मेरे !
तप्त मरु में नभचरों को कठिन आतप-ताप घेरे !
आज जीवन फूल उनका
शूल से बिंध म्लान सा है;
विहग-दल के मधुर स्वर का
बस विकल अवसान सा है !

सब सुखों के स्वप्न जिनके
डूबते ले चिर निराशा,
स्निग्ध शीतल छाँह से
यदि दे सको तुम प्राण आशा;
कर सकें विश्राम क्षणभर डाल में सब डाल डेरे !
आँख में आँसू भरे, मन—
में, तृषा की वेदना है,
जा रहे असहाय जग से
हृदय में यह चेतना है;
धूल में मिलते न कह सकते
करुण अपनी कहानी,
गूँजता नभ में रुदन स्वर
है यही उनकी निशानी !
दे उन्हें रस अमृतफल का हो सफल तुम प्राण मेरे !
तरु बनो तुम प्राण मेरे !



४

शरद निशि हो, चाँदनी हो,
स्वच्छ सर हो औ' न कोई,
बस जगे सुधि मिलन की
जब शान्त हो सब सृष्टि सोई !

चन्द्र-किरणों से उतर तुम
देवि, मेरे पास आओ,
छू हृदय कवि-कल्पना के
विकल पल मधुमय बनाओ !

करुण ज्योत्स्ना में बहा दें
विरह जीवन विरस अपना,
प्रात के पहले पधारो
छोड़ मुझको सत्य सपना !

दिन मलिन चाहे भले हो
रात हो उज्ज्वल हमारी,
साधना-पथ के पथिक की
साध हो साकार सारी !



५

प्रिय, न यह पथ भूल जाना !
याद कर लेना दृगों का पुलक कर पलकें बिछाना !

शून्य मानस को निरन्तर
स्नेह से भरती रहूँगी,

विरह की ज्वाला करुणातम
दीप सी जल-जल सहूँगी,
पर बुझाने तुम इसे प्रिय, वात बनकर प्रात आना !
दूर उर-मधुमास से बस
भूलना मत प्यार मेरा,
दे न देना यह किसी को
हृदय का उपहार मेरा,
बन मिलन की सरस-सुधि प्रिय, सींच यह पतझार जाना !
प्रिय, न यह पथ भूल जाना !



६

किस पथ से कलियों के मुख में
मुस्कान बने तुम आते हो ?
किस स्वर से सरिता-लहरों में
कलगान सदा भर जाते हो ?

बतला दो कवियों को कैसे
प्रिय, प्रणय-गीत सिखलाते हो ?
बालारुण के पहले हँसकर
प्राची में क्यों छिप जाते हो ?

किस प्रेम-भावना में भूले
कोकिल को गीत सुनाते हो ?
किस मधुमय आशा से अलि में
मञ्जुल गुञ्जन भर जाते हो ?

तुम स्वयं विजन में बसे हुए,
पर विश्व-सजन कहलाते हो !
छिपकर सबसे रहते सबमें
इसमें तुम क्या सुख पाते हो ?





प्रिय नहीं मुझे अब मिलन चाह !
प्रियतम की मञ्जुल छाया सी प्रिय लगती मुझको विरह-दाह !
संयोग-क्षणों में पलता भय,
होगा परिणाम विरह निश्चय ;
यों करता रहता मन संशय
दुख आयेगा सुख का कर क्षय !

इस विरह-गगन में तिमिर-स्नात
खिलता है आशा का प्रभात;
विस्मृति की स्मृति पाती विकास
क्षण-क्षण बढ़ती है प्रणय-प्यास!

मेरे प्राणों की सरस साँस अब है वियोग की करुण आह !

फिर क्यों हो मुझको मिलन चाह ?
प्रिय नहीं मुझे यह मिलन चाह !



८

कवि को प्रणय-गीत गाने दो !
स्वप्न-मिलन की सुख-सुषमा को एक बार बस जग जाने दो !
विगत दिनों का सुखमय चिंतन—
कर, पुलकित होता मानव-मन,
प्रेममयी प्रियतम की प्रतिमा
स्मृति पट-पर फिर खिंच जाने दो !

हो यदि कूलों सा चिर अन्तर
सत्य रहे स्वप्नों सा अस्थिर,
इस जीवन को उस जीवन से
गीतों से अब मिल जाने दो !

कवि को प्रणय-गीत गाने दो !



६

भूलकर सुख साज सारे छेड़ अब दुख-राग कोकिल !
बन गये सब स्वप्न से सुख आज फूटे भाग कोकिल !

मधुर मधुऋतु यामिनी की
क्षीण वीणा बज रही है;
चेतना की वेदना यह
मोतियों से सज रही है !

बन गये अपने पराये
बढ़ रहीं उर की व्यथायें;
थे कभी जो साथ सुख में
दूर रह सुनते कथायें !

है कहाँ तू ही बता दे वह प्रथम अनुराग कोकिल ?

शब्द में वह ध्वनि नहीं जो
प्रेम की गाथा सुनाये;
है नहीं वह प्यार पागल
आज रूठे को मनाये !

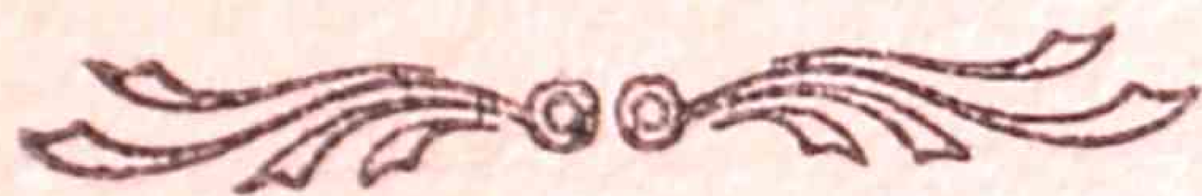
वेदना बेसुध लहर में
बह रहे किसको बतायें ?
यह अभागा गान दुख का
फिर इसे किसको सुनायें ?

शिशिर-हिम में जल गया वह मृदुल सुषमा बाग कोकिल !

आह ज्वाला की जलन से
हृदय के दुख घाव बनकर,
बह रहे अविरल दृगों से
अश्रु के मिस आज झर-झर !

स्वप्न-नीड़ों से विकल हो
कामना के विहग भागे;
आ पड़ा पतझर अचानक
कौन से दुर्भाग्य जागे!

लुट गया यों ही अचानक सुभग स्वर्ण सुहाग कोकिल!
भूलकर सुख साज सारे छेड़ अब दुख-राग कोकिल!



१०

तुम आये थे प्रिय, एक बार !
संचित सौरभ से खिले मुकुल खुल गया हृदय का बन्द द्वार !
था वन-वन में बिखरा वसंत,
उत्फुल्ल सुमन, शोभित दिगंत;
ऊपर हँसता था मग्न गगन,
नीचे सुरभित पुलकित उपवन;
आया फागुन मधुमास मदिर, खेलो होली की थी पुकार !

जाग्रत सपने नयनों में भर,
सुखस्मित बन खिलता अधरों पर;
मधु-पर्व मनाता था प्रतिक्षण,
बेसुध हृदयों का मूक मिलन;

धो सका न मन वह रंग लास, मिट सका न उर से पुलक-प्यार!
तुम आये थे प्रिय, एक बार!



११

किस विहग ने गान गाया ?
हृदय-सागर में अचानक भाव का तूफ़ान आया !
हो रहा हूँ पुलक-विजड़ित
किस मदिर अवसाद से मैं ?
दूर होता जा रहा हूँ
नेति-नेति विवाद से मैं;
भावना-ललिता-लता में प्रेम का मधुमास छाया !

नेह के नव सुमन सुरभित
आज स्वागत हेत फूले,
कामना कमनीय पंछी
कुसुम की प्रति डाल डोले;

प्रिय-मिलन के सुख-समय का मलय मधु-सन्देश लाया !

किस रसिक ने गान गाया ?
किस विहग ने गान गाया ?



१२

कौन-कौन तुम स्वर्णिम तन धर
अम्बर से आती अवनी पर?
शुष्क प्राण में नवजीवन भर,
अखिल विश्व को आलोकित कर!

विकसित सुमन पवन मृदु गतिमय,
लहराते तृण, तरुवर, किसलय;
विहग बाल हो चंचल, चंचल,
कलरव कर उठते प्रतिपल, पल !

नीरव जग में फिर कोलाहल,
सजग भोर में निद्रा का बल !
"जीत पहन उठ विजयहार-वर,
जग-जीवन के चेतन तट पर"

कह-कह यह सन्देश मृदुलतर,
मानव मन की उन्मनता हर,
कंठ-कंठ में निज सुख-स्वर भर;
छिप जाती तुम कौन, कहाँ घर ?



१३

बोलो यमुना की करुण धार !
किस विरह-व्यथा से छहर छहर,
बहती मृदुगति से ठहर ठहर,
हो देख रही स्मृति-पट में तुम किस निर्मोही का क्षणिक प्यार?

क्या माधव का वह मधुर गान,
उस वंशी की मधु-मुग्ध तान,
हो सोच रही वे दिन महान, क्या राका निशि के जल-विहार ?
था कभी तुम्हारा भाग्य-भोर,
वैभव का मिलता था न छोर,
पर आज समय के परिवर्तन से सुखद साज सब हुए भार !
सुरसरि से मिलने को सत्वर,
तुम बढ़ी चलो कहती स्वर भर—
"है छिपा पड़ा जग कण-कण में निर्मम नश्वरता का विकार"!
बोलो यमुना की करुण धार !
गा दो यमुना की करुण धार !



१४

यह प्रथम मिलन की प्रथम बात !
झिलमिल तारक-दल से हिल-मिलकर थी कितनी वह मधुर रात !

नत नयनों से मुझको निहार
साधनासीन-सी मञ्जु मूर्ति,
युग-युग के करुण अभावों की
कल्पना-स्वप्न की पूर्ण पूर्ति !

तुम अपनी छवि में छिपी हुई
मृदु अधरों में कर बन्द हास,
बैठी थीं पुलकाकुल, करतीं—
वितरण, सुख-सौरभ सरल श्वास!

तुम सहज सलज थीं मंत्रमुग्ध, था सजल स्नेह मधुस्नात गात !

कोमल कपोल कल मुकुल रूप
मधुलोलुप मन बन भ्रमर भ्रान्त,
ले, गया पास सन्तप्त साध
चिर अजय प्यास से शिथिल श्रान्त !

समझी-सी सिसक पड़ी सत्वर
जल, थल में, नभ में मलय वात,
गा उठा मिलन का मदिर गीत
इस विश्व-वृक्ष का पात-पात !

खुल गये सुमन, मधु सुरभि मुक्त, विस्मृति-बेसुध बस हुआ प्रात !
यह प्रथम मिलन की प्रथम बात !



१५

छलकती उर में मधुमय साध
भरा जीवन में दुःख अपार;
हृदय को कर देना उद्भ्रान्त
शून्य में स्वप्नों का सञ्चार !

एक तुम से था जब तक देवि,
समाहित था मुझमें संसार;
विलग होते तुमसे सुकुमारि,
हृदय-तंत्री के बिखरे तार !

न पहिली सी मादकता आज
न भीनी मीठी सी झंकार;
स्वरों का अस्फुट आहत गान
वेदना में करता अभिसार !

इसी आशा में पलते प्राण
कभी जय बन जावेगी हार;
तुम्हारा ही छूकर मधु-हास
फूल होगा शूलों का भार !



१६

जग-जीवन का अविरत प्रवाह !

बुद्‌बुद बन मिटता ले कोई जीवन नश्वरता की कराह !

दो दिन का यह वैभव सारा,

दो दिन का यह मादक विलास ;

क्यों दूर खड़े हो बन उन्मन,

आओ बैठें प्रिय, पास-पास !

भूलें श्रम क्षणभर हिल-मिलकर फिर चलना है अति कठिन राह !

मृग-तृष्णा की नव आशा में,
जग बसा हुआ मोहक असार,
इस जग में पागल पथिकों की
है हार-जीत बस जीत-हार !
सब एक पहेली-सा देखा है आदि-अन्त जिसका अथाह !
जग-जीवन का अविरत प्रवाह !



१७

अयि विजन-बाले, बता दो क्या उसे तुम जानती हो ?

जो मधुर-स्वर कोकिला ने कण्ठ में जिसका बसाया,

रो निशा के आँसुओं में जो कली में मुस्कराया,

कर हृदय मेरा हरण जो विश्व कण-कण में समाया,
जागकर खोया उसे पर स्वप्न में नित पास पाया !
चोर वह अज्ञात देशी है—इसे क्या मानती हो ?

इन्द्रधनु में हास से अपने नये जो रंग भरता,
सान्ध्य मेघों को सुनहले स्वप्न का संसार करता,

छाँह छू जिसकी धरा पर रूप का सागर लहरता,
बन चिरन्तन पीर जो फिर प्रेम-प्यासों में सिहरता !
खोजता फिरता जिसे मैं क्या उसे पहिचानती हो ?
अयि विजन-बाले, बता दो क्या उसे तुम जानती हो ?



१८

कली से बँधे तुम्हारे नयन !

मुख सित सेज कमल पर जैसे करते सुमन शयन !

कुञ्चित असित अलक मधुकर-सी

मदिर मन्द मुस्कान अधर की,

स्नेह-सुधा से सिंचित रूपसि, मीठे-मीठे बयन !

नेह-नाव पर प्रेमांबुधि में,
किस आकर्षण की सुख-सुधि में,
तिरते आप विश्व छवि से बिंध करते मुक्ता चयन ?
कली से बँधे तुम्हारे नयन !



१६

मेरा अति सुन्दर जीवन हो !
स्नेह-स्निग्ध कोमल किसलय तन, नित नव निर्मल मेरा मन हो !
नव-कलिका-सा आनन मुकुलित,
जिसे देख सब जन हों पुलकित,
मेरी रूप सुधा से सिंचित इस नीरस जग का कण-कण हो !

मैं अपनी सुरभित साँसों से,
उर के निश्छल विश्वासों से,
अंग-अंग में सुख सुषमा भर दूँ शोक शमन मेरी चितवन हो !
मेरा अति सुन्दर जीवन हो !



२०

नील नीरज के नयन से !

कह रही कुछ प्रकृति प्रेयसि मौन मधु साधे बयन से !

साँस में सुरभित व्यथा की

कवि-कथा मन में छिपाये,

वेदना के बिन्दु घन बन

पलक-पुट में हैं समाये ;

स्नेह-साधक को सुधाकण बरसते अविरल गगन से !

बाढ़ यह उद्गार की कब
विश्व में थमकर चली है,
दे न अलि को दान मधु का
कब खिली ऐसी कली है ;
सरस समवेदन लिये नभ अवनि मिलते हैं मगन से !
सहज सीमित से असीमित
मिलन की सच साधना हो,
आज अलख अरूप में बस
रूप की आराधना हो ;
जीत पावन प्रीति की हो सब मिलें सुख से सजन से !
नील नीरज के नयन से !



२१

बस। लूँ मैं अपना संसार !

कोई नाम न जाने दुख का,
सभी स्वप्न देखें चिर-सुख का,
सबका यौवनकाल सदा हो, सुख-सौरभ-संचार !

सब समान हों सुन्दर तन से,
ज्योतिर्मय माणिक सम मन से,
सबके मानस मध्य मुकुर-सा हो निश्चल व्यवहार !

मधुऋतु सदा रहे उपवन में,
कोकिल गान करे वन-वन में,
शीतल मन्द सुगंधित निशिदिन बहती रहे बयार !

नित नव सुषमा फैले जग में,
कंटक हों न किसी के मग में,
शान्त स्निग्ध सब रहें, विश्व का हो स्वर्गिक शृंगार !
बसा लूँ मैं अपना संसार !



२२

नहीं कुछ इसका मुझको ध्यान
मुझे क्या कहता यह संसार;
प्रकृति का कण-कण भी अनजान
स्नेह का करता है व्यापार !

शलभ-दल हो उठता उन्मत्त,
सजल दीपक का जलना देख ;
कुसुम उन्मीलित करती मौन,
तरणि-किरणों की स्वर्णिम रेख !

देख नभ में शशि सुन्दर रूप,
उमड़ ऊपर उठती जल-धार ;
फूटता कोकिल-कंठ अजान,
जानकर मधुवन बीच बहार !

आज फिर क्यों कहते हैं लोग
पापमय होता जग का प्यार ?

देख गगनांगन में घनश्याम,
मोर मादक हो जाते भ्रान्त ;
देखते चंचल चन्द्र चकोर,
नहीं होते हैं फिर भी श्रान्त !

लोह-चुम्बक हैं जड़ पर देख—
परस्पर मिलते उर को खोल ;
विश्व में हृदय-हीन है कौन
दिया जिसने न प्रेम का मोल ?

बन्द पंकज-पल्लव में भृंग,
किया करता मधुमय गुंजार ;
यहाँ वर बन आते अभिशाप,
प्रेम से निर्मित रे संसार !

पड़ी मानवता बन्दी आज,
इसी से कलुषित इसका प्यार !



२३

स्नेह से सने विहँसते अधर,
लाज के बन्धन देते तोड़,
प्रेम-प्लावन में उठी हिलोर,
कौन कब सकता उसको मोड़ ?

साधना साधक में लवलीन—
देखती कितने स्वप्न महान,
हृदय में किसके क्या अनुराग
कौन कर सकता है अनुमान !

उलस पुलक से आह दाह से
कैसे कह दे अहे सुजान ?
कवि का कंठ मुखर हो जाता
विश्व जानता जिसको गान !

उर की व्यथा कथा क्या कहती
शब्दों में भरना निस्सार,
चले चलो बढ़ चलो पथिक तुम
जग-जीवन है वीचि-विहार !



२४

जग ! जग ! जग-जीवन के विहान !

जड़ बना विश्व आकाश मूक संसृति विदग्ध म्रियमाण प्राण !

किस पागल पीड़ा के प्रवाह में

पड़ उर विचलित बार-बार,

कह उठता मानव हो निराश

जीवन से मैं अब गया हार ?

उठ ! उठ ! सबको फिर दे प्रबोध फड़कें नस-नस में नवल प्राण !

भूलें विषाद हो सुख अगाध
जग एकबार फिर बने स्वर्ग,
बस मानवता हो मूल मंत्र
भूलें विभिन्न जातीय वर्ग ;
हँस ! हँस ! जगमग जग-मग कर दे भर दे साँसों में अमर प्राण !
जग ! जग ! जगजीवन के विहान !



२५

मौन हो मत यों रहो प्रिय, मधुर मुख से आज बोलो !
लाज के ढीले रँगीले बन्धनों को विहँस खोलो !

मिल गये इस पंथ में हम
किस तपस्या के सुफल से ?
साध के किस सहज बल से ?

प्रणय-सरिता से विरह-जीवन पुलिन इस बार धोलो !

बस हृदय में बस मिटा दो
द्वैत अपने अमर कर से,
रूप के स्वर्गीय वर से,
स्नेह से इस विरस जीवन में सरसता सार घोलो !
मौन हो मत यों रहो प्रिय, मधुर मुख से आज बोलो !



२६

हे नभ के नव श्यामल घन !
क्षितिज पट पर तुमने छविमान
किये कितने सपने साकार !
झूमते फिरते हो सोल्लास
लिए दामिनि कामिनि का प्यार ;
मुग्ध परियों का अवलोकन,
तुम्हारा सरल तरल जीवन !

विश्व की सुषमा का घनश्याम
तुम्हीं में अविदित-सा आवास;
तुम्हारी छाया में जग-प्राण
समुद लेता है सुख की साँस;

बना दो मधुमय उर-उपवन
तुम्हारा करुणामय जीवन!

ऐ नभ के नव श्यामल घन!



२७

कौन छवि नीरव नयन में ?
छा रही सुख-साधना-सी हृदय के कल कुञ्ज वन में !
सजल पलकों में प्रणय की—
प्यास का संसार बसता,
श्वास से उच्छ्वास बन, मन
विकल विस्मित आह भरता ;
छा रही परिचित अपरिचित पुलक-सी तन, मन बयन में !

साध हो साकार आई
प्राण से अभिसार करने,
भावना की मूर्ति मञ्जुल
विहँसती सुधि-भाव भरने ;
स्वप्न-सा कुछ देखता हूँ आजकल मैं जागरण में !
कौन छवि नीरव नयन में !



२८

स्नेह की शुचि तरणि पर चढ़—
हृदय-सागर के भँवर में—
मैं मिला था देवि, तुमसे
मगन मन स्वप्निल डगर में !

कमल कर से कर पकड़
तुमने मुझे बन्दी किया था,
सरसता का विरस जीवन में
प्रथम परिचय दिया था !

था दिया वह प्यार मधुमय
पी जिसे उन्मद बना मैं,
भूल शत-शत गत दुखद क्षण
शान्त सुख रस से सना मैं !

पर अचानक सजल दृग से
कर उठीं तुम करुण क्रन्दन,
रुक गया सहसा समीरण
स्तब्ध हृदयोल्लास स्पन्दन !

"भूल" कह बस स्वप्न-पथ में
खो गईं तुम क्यों न जाने !
उस मिलन की मधुर स्मृति के
हैं छलकते आज गाने !



२६

प्रेम की यह विश्व-माया !

देख लो प्रेयसि अवनि पर सघन घन की सजल छाया !

प्यार के बल पर पपीहा
प्यास की चिर-साधना ले;
एक जीवन-बिन्दु के हित
फिर रहा सुख-कामना ले;

देख लो शशि ने निशा में सजल उर्मिल प्यार पाया।

प्यार पाकर प्राण जग में
श्वास झूला झूलते हैं ;
प्यार से पुलकित वनों में
कुसुम कोमल फूलते हैं ;
देख लो जल, थल, गगन में प्रेम की मनहरण माया !

फल रहे हैं युग-युगों से
दुख-लता में प्रेम के फल ;
विश्व-जीवन का चिरंतन
है रहा बस प्यार संबल ;
देख लो है दूर फिर भी स्वप्न में प्रिय पास आया !



३०

ऐ उपवन के उन्मन फूल !

सजल अमल दल मधु से पुलकित अलिनी के सुख-मूल !

सुख-सौरभ से भले भरे हो,

दुख से पर तुम नहीं परे हो,

तुमसे कोमल प्राणी को भी मिलते साथी शूल !

मलयानिल तुमको सुहलाता,
प्रणय-गान से अलि बहलाता,
किन्तु प्यार करते सब क्षण भर फिर होते प्रतिकूल !

धूल धूसरित, पतित अपावन,
बन जाओगे, खो अपनापन,
देवलोक से जग में आये कैसे की यह भूल ?
ऐ उपवन के उन्मन फूल !



३१

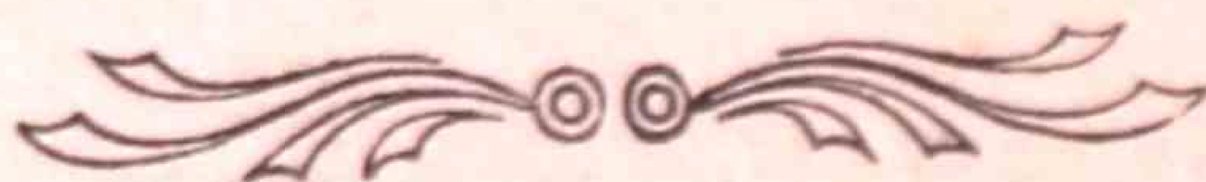
पा न सका मैं प्यार तुम्हारा !
विरह-सिन्धु है बढ़ा घिरा तम डूबा कूल किनारा !

स्नेह-स्वप्न-छाया में छिप-छिप
देवि, देख तुमको लेता हूँ,
प्रति निशि को प्रिय-पद-पद्मों में
नीरव अश्रु अर्घ्य देता हूँ ;

रोम-रोम में पुलक, श्वास में—
गिन-गिनकर स्मृतियाँ भरता हूँ ;
कैसे कहूँ आज फिर कितना
अथक प्यार तुमको करता हूँ ?

चिर अतृप्ति के कठिन करों ने परिणाय रचा हमारा !
नव-वसंत पुलकित जग-जीवन
जीवन तुमको कैसे पाऊँ ?
मिलन गीत इस जग के स्वर में
हिल-मिलकर मैं कैसे गाऊँ ?

विकल थकित मैं तुम नभवासिनि
कैसे तुमको सहज बुलाऊँ ?
अपने उर की आकुलता की
किसको कैसे कथा सुनाऊँ ?
मिलन नहीं बस एक मिलन सुधि मुझको मिली सहारा !
पा न सका मैं प्यार तुम्हारा !



३२

सुन्दर सुखकर पावन प्रभात ।
कुसुमित कुञ्जों में मचल-मचल,
लहरा लतिकाओं का अञ्चल;
चुम्बनमिस कलि-कलि में भरता मधुमय नवजीवन सरस वात !

मनहर कलरव करते विहंग,
बजते निसर्ग के जलतरंग ;
ऊषा नभ में नव नृत्य वधू-सी सजती है सिन्दूर स्नात !
रञ्जित कलियों की रत्नमाल,
ले जग में जगती ज्योति-ज्वाल;
बालारुण का पाकर प्रकाश रुक जाता जग का पलक-पात !
सुन्दर सुखकर पावन प्रभात !



३३

अरी ओ करुणा अश्रु की धार !

दुख-सुख के संयम से संचित,

हृदय-भावना में अतिरंजित,

बही आज किस मरु को देने उपवन का उपहार ?

मेरा उर दीपक-सा जल-जल,
सजल बन गया कोमल उज्ज्वल,
मेरी सुख साँसों में पुलकित तेरा ही उद्‌गार !

तेरे करुणा-कण को पाकर,
पीड़ित अपना हृदय जुड़ाकर,
प्रेम-पयोनिधि को पुलकाकुल कर जाता है पार !

तेरे रजत कणों को लेकर,
नींद-नीड़ में सपने बुनकर,
कहो बना दूँ प्रेयसि, पहनो अपना यह तुम हार !
अरी ओ करुणा अश्रु की धार !



३४

कलिके ! तुम अबोध अनुरागिनि
ले मधु-सौरभ का उपहार,
किस प्रिय अलि के चल चुंबन में
तन-मन अपना दोगी वार ?

मधुरे! तुम हो सजल सुहागिनि
पाकर अपने प्रिय का प्यार,
मेरे सजल तृषित नयनों को
थकना है बस पंथ निहार!

हम दोनों फल निठुर नियति के
तेरा सुखमय मधुवन वास,
मैं पाकर अभिशाप पाप का
बनी आज दुख का इतिहास!

दे दो निज सौभाग्य-सिन्धु से
करुणा की बूँदें दो-चार,
सखि! मधु से कुछ हलका कर दो
मेरी इस कटुता का भार!



३५

अतल जल के पार मधुरे !
जा बसीं सुख-स्वप्न लेकर मैं रहा इस पार मधुरे !
बन गये संतापमय अभिशाप सब वरदान मेरे,
लोचनों में हैं बिलखते मधु मिलन के गान मेरे;
स्नेह की सरिता सँजोती वेदना के ज्वार मधुरे !

प्रीति-पावस की झड़ी में भीजता हूँ मैं अकेला,
खिल न पाया था मुकुल-मन आ गई पतझार वेला;
प्राण-पंकज झुलसता है विरह-हिम के भार मधुरे !

छू किरण जिस ज्योति की जीवन सरस मैंने किया था,
जीतकर जिन नयन-प्यालों से छलकता मधु पिया था;
हो गई वह जय-पराजय प्यार दुख उपहार मधुरे !
अतल जल के पार मधुरे !



३६

यद्यपि दूर, अपरिचित-सा मैं
मेरे मन का यह उपहार,
अपनी स्नेह-शीलता से वे
कर लेंगे इसको स्वीकार !

किसी देव की प्रिय पूजा का
प्राप्त सभी को सम अधिकार,
आज मुझे भी अर्पण करना—
है मन-मधु का मौन दुलार !

कुम्हलाए कुसुमों का मैंने
सकुच पिरोया है यह हार,
बीच-बीच में गुथे हुए हैं
आँसू के मोती दो-चार !

कब से प्राणों के मधु से मैं
धोता हूँ नयनों का न्नार
इसे पहिनकर समझ सकोगे
मेरे उन्मन उर का प्यार !



३७

बताऊँ तुमको कैसे देवि, तुम्हें मैं करता कितना प्यार !
आह से वाणी से भी दूर बसी छविमान क्षितिज के पार !

मुकुल मधु-सरिस नवल मृदु गात,
चाह की चितवन वह अवदात;
तुम्हारा सरस परस प्रिय बोल,
सकुच बन्धन देता था खोल;

प्रणय से प्लावित कर संसार !

तुम्हारा स्नेह-सुधा-रस पान,
अमरता का उद्‌दास वरदान;
तुम्हारे काले केश अशेष,
देख बँधता था नयनोन्मेष;
मुक्त कवि-हृदय सहज सुकुमार !

तुम्हारा स्वप्न-मिलन अनजान,
ज्वलित उर का सकरुण अभिमान;
तुम्हारा सरल तरल परिहास,
मोहमय मादक वारि-विलास;
आज बस सुख-सुधि का उपहार !

मदिर मधुच्रण का मदिर प्रभात,
पुलक से आकुल तृण, तरु-पात;
विश्व सुषमा सुख से भरपूर,
आह ! मैं तुमसे कितनी दूर;
कौन कब देता किसे दुलार !
बताऊँ तुमको कैसे देवि, तुम्हें मैं करता कितना प्यार !





३८

आज नवजीवन शपथ करो !

तन में, मन में, गगन-अवनि में कवि-छवि नवल भरो !

शोषित हों पोषित सुख-परिचित,

मानवता सनेह संरक्षित,

अलसित रुद्ध अतीत प्रीति तज नूतन रूप धरो !

सृष्टि-श्वास में सबल प्राण भर,
आत्म-चेतना सजग बनाकर,
अंध अधोमुख जग-जीवन में ज्योतिर्मय विहरो !
आज नवजीवन शपथ करो !



३६

सांध्य गगन जब निशा माँग में
शुचि सिंदूर चढ़ाता है,
उसकी असित सघन अलकों में
तारक सुमन सजाता है।

मलिन थकित-सी नलिनी अपना
पलक-पात जब कर लेती,
अलि प्रिय को अपने मृदु उर में
शयन-सेज जब दे देती !

जब नभ की सुख-सलज्ज लालिमा
करुणा मेघ-दल से मिलती,
चन्द्रबिम्ब को देख पुलक से
कलित कुमुदिनी जब खिलती !

जब दिन-रात मौन हो मिलते
प्रेम-पूर्ण होता संसार,
ओस-कणों में बिछ जाते हैं
मेरे ही आकुल उद्गार !



४०

आज मुझको प्यार कर लो !

चल रहा हूँ युग-युगों से
प्यार का उपहार पाने,
रो चुका हूँ वेदना में
गा चुका सुख-स्वप्न गाने;
स्निग्ध शीतल अंक में सन्तप्त तन को आज भर लो !

नयन-पथ से आ पुलक बन
हृदय में मेरे समाओ,
विश्व को फिर मादिर स्वर में
गीत मनमाने सुनाओ;
प्रीति से, भयभीत प्राणों का कठिनतम ताप हर लो !
आज मुझको प्यार कर लो !



४१

कोमल पल्लव के पलने में
निशि-दिन मैं झूला करती हूँ;
अपने उर के मधु-सौरभ से
जग में जीवन-मधु भरती हूँ !
चल पवन थपकियाँ देता नित
शृंगार किरण करने आती,
सखि तितली अपने रंगों से,
मन में मादकता भर जाती !

मेरे मुकलित मुख-चुम्बन को
मधुवन में मधुऋतु आता है,
ले मेरा नीरव नयन-गान
कवि मधुमय गीत सुनाता है !
मैं खिल-खिल हँस-हँस खेल-खेल
जग में सुषमा बिखराती हूँ,
स्नेहाकर्षण से जन-जन को
मैं पल में स्वजन बनाती हूँ।

झुलसे दल पर सहृदयता की
कुछ झलक छोड़ मुरझाती हूँ,
अपने प्रिय पथिकों के पथ में
मैं विगलित पलक बिछाती हूँ !



४२

प्रीति-प्रतीक्षा में प्रियतम की
व्याकुल बीती सारी रात;
खुली, मुँदी अलसाई आँखें
सजग विश्व खग, मृग, तरुपात !

मिलन-समय की बेसुध-सी छवि
अलसित पलकों में अनजान;
भरती रही केलिक्रीड़ा का
व्रीड़ामय मद उन्मद गान !

छुटी किरण उड़ गये स्वप्न सब
तुम न अभी आये सुकुमार,
मौन मलिन मुख सकुच सहज सुख
लज्जित-सा स्वप्निल शृंगार !

मधुवेला की सरस संगिनी
पाकर पतझर का सहवास,
चली कली ले भरा हृदय, मन
विश्व-प्रणय का बन उपहास !



४३

दूर भी यदि मैं रहूँ क्या याद मेरी छोड़ दोगी ?

भय नहीं हम आज बिछुड़े
फिर मिलेंगे कुछ दिनों में
भूल जायेंगे सभी दुख
मधु-मिलन के सुख क्षणों में

युग-युगों की साधना से प्राण क्या मुख मोड़ लोगी ?

भूल भी जाओ मुझे तुम
कर चुका मैं सब समर्पण
था किया स्वीकार जिसने
प्यार का पागल निमंत्रण

चाह की अधिकार से अब यह सनातन होड़ होगी ?
दूर भी यदि मैं रहूँ क्या याद मेरी छोड़ दोगी ?



४४

कौन देव मेरे मानस में
अनजाने आ जाता है ?
सोती विरह-वेदना को फिर
हौले सजग बनाता है !

अलसाए अतीत का गौरव
गाकर मुझे सुनाता है;
मेरे रोम-रोम में फिर से
पुलक-कुलक भर जाता है !

भार मुझे विस्मृत पीड़ा का
आकुलता दे जाता है;
क्षणभर की सुख-सुषमा देकर
चिर-वेदन उकसाता है !

किस स्वप्निल सुधि से मन मेरा
बेसुध-सा बन जाता है,
मेरी विगलित उर-वीणा को
लुक-छिप कौन बजाता है ?



४५

तुम सृजन-किरण बन आओ !
विकल विफल निर्बल प्राणों में नवजीवन भर जाओ !
मानव मोह बढ़े मानव से,
संयुत शक्ति भिड़े दानव से,
सुषमा का उपवन फिर जग में एक बार लहराओ !

कोई करे न पर सुख-शोषण,
साम्य भावनामय हो पोषण,
जगे सत्य जग के जन-जन में प्रीति-रीति सिखलाओ !
सबके हों अधिकार सुरक्षित,
होवें सब स्वधर्म से परिचित,
तरसें देव देख मानवता ऐसी समता लाओ !
तुम सृजन-किरण बन आओ !



४६

देवि, कैसे लौट जाऊँ ?

कह रहीं तुम अगम है पथ किन्तु मन कैसे मनाऊँ ?

साधना को साथ लेकर
चल रही आराधना है;
वेदना-बलि भी बनूँ तो,
विश्व को न उलाहना है !

लौटना कितना असम्भव यह तुम्हें कैसे बताऊँ ?

अश्रु यदि अज्ञात आँखों में—
रहें तो दुःख क्या है ?
कर चुका जब आत्म-अर्पण
प्राप्ति में सुख और क्या है ?
हँस पड़ूँ, बस बढ़ चलूँ मैं क्यों न गतिमय गीत गाऊँ ?
देवि, कैसे लौट जाऊँ ?



४७

कह देती हो—

"जाओ प्रिय, पर जा न सकोगे,
बन्धन कठिन छुड़ा न सकोगे,"
जब जाने की मैं हठ करता;
सजल-नयन बस हँस देती हो !
कह देती हो !

निष्ठुर प्राणों की आकुलता,
विरह-जनित दुख की विह्वलता,
सहृदयता की सहज ओट में
करुणामय बन सह लेती हो !
कह देती हो !



५८

मेरी मृदुल माधवी मन की
मेरे जीवन की आधार,
पंथ हेरती होगी प्रतिपल
ले उत्सुक पलकों में प्यार !

किस निर्जन बन में भूली-सी
कोमल कलिका-सी भोली,
अपनेआप अपरिचित फिरती
लिये पराग-भरी झोली !

अपने मन के मधु सौरभ से
उर की अथक उमंगों से,
छवि की छनी, साध सालस-सी
रँगी लाज के रंगों से !

बाँकी-सी झाँकी, चितवन में
नेह-निमंत्रण का शृंगार,
प्रेम-पिपासा के कुञ्जों में
कलित कल्पनामय अभिसार !

जीवन-सागर की लहरों में
फेनिल बूँदों-सी छविमान !
वहन कर रही सजल-सलज प्रिय—
मिलन-समय-सुधि मधुमय गान!

सीमाहीन पुलिन-प्लावन में
बहते-बहते कभी अजान,
हम तुम भी मिल सकें सहज ही
जल में जल की बूँद समान !



४६

चंचल आशा-सी चपल-तरल
शशि की किरणें उतरीं भू पर,
निशि-सुप्त धरा के अंचल में
भरतीं कितने गीतों के स्वर !

मानव के उर-सर में भी नित
लघु लहरें उठती हैं कितनी ?
कुछ ले जातीं पीड़ा मन की
कुछ दे जातीं क्रीड़ा अपनी !

चल-आशा के कण-कण से ही
है निर्मित यह मानव-जीवन,
आशा के ही आलोक-पुलक
से, छूता जीवन ज्योति किरन !

इस आशा के झिलमिल पट पर
बस एक रेख है सत्य अमर,
"जग-जीवन निज मनका स्वरूप"
रे इसी ज्ञेय पर जग निर्भर ?



५०

प्रिय मिलन का दिन न आया !
युग-युगों का स्नेह-साथी
साधना से क्षीण होकर,
बज रहा हूँ भूल सुख-सुधि
वेदना की बीणा बनकर,
प्राण मेरी रागिनी का स्वर न क्यों पहिचान पाया !

करुणा कितना प्रेम पारावार की—
प्रिय थाह पाना,
दूर से परिचित किसी की
चाह में उस पार जाना,
कौन जाने फिर कहाँ यह पूर्ण होगी मोह-माया ?



५१

जीवन में जीवन आया !

जग की इस नीरस कटुता में किसने मधु बरसाया !

पुलक पल्लव पात से
तरु आज स्वागत कर रहे हैं,
सुरभि वितरण कर सुमन सब
विश्व में सुख भर रहे हैं ;

जगी दूर बेसुध-सुधि किसकी ले करुणा की छाया !

विहँसती ऊषा क्षितिज में
हृदय में प्रिय को छिपाये,
मधुमिलन के दिन सभी की—
साधना से साथ आये ;
स्वप्न-सृष्टि में मैंने तुमको अपने मन का पाया !
जीवन में जीवन आया !



लेखक की साहित्यिक कृतियाँ

काव्यसंग्रह

१——पर्णिका

२——वासंतिका

३——हेमंतिका (अप्रकाशित)

आलोचना

१——काव्य-कलना

२——नीर-क्षीर

३——निबन्धिनी